

दूसरी नज़र

पी चिदंबरम

री जनादेश हमेशा वरदान नहीं होता, एक कमजोर विपक्ष शासन को कहीं ज्यादा मुश्किल बनाता है और लगातार दूसरी पारी शासकों को कोई बहाना बनाने का मौका नहीं देती। मुझे विश्वास है कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जनता की भारी–भरकम उम्मीदों से पूरी तरह वाकिफ हैं और उन्होंने अपनी मंत्रिपरिषद पर इसके लिए बड़ी जिम्मेदारी रख दी है। उनके पहले कार्यकाल को देखते

हुए मुझे पक्का भरोसा है कि वे इस चुनौती को पूरा करने के लिए हरसंभव कदम उठाएंगे। इसमें दो अड़चनें हैं। पहली तो यह कि भारत में चीजों को करने का तरीका पुराना ढर्रा लिए हुए है। दूसरी यह कि लोगों के विभिन्न वर्गों के प्रतिस्पर्धी दावों में गरीबों, सबसे कमजोर तबके, सबसे ज्यादा वंचितों और शोषितों की आवाज दब गई है। हमारा अनुभव यह रहा है कि शासनकाल के आखिर में पुराने ढरें वाले तरीकों से वक्त और सम्मान ही बढ़ा है, और गरीब, कमजोर, वंचित और शोषित अब भी गरीब, कमजोर, वंचित और शोषित ही बने हुए हैं।

वक्त की कसौटी और नाकामी

अपने दूसरे कार्यकाल की शुरुआत मोदी को पुराने ढर्रे को ध्वस्त करने से करनी चाहिए। मोदी के मित्र अरविंद पनगड़िया और वेंकटेश कुमार ने इसके ये तरीके बताए हैं-

'उनके (श्री मोदी के) शासन मॉडल में मुख्य बात सचिवों के समूहों की नियुक्ति रही, इनमें सचिवों के हर समूह को आर्थिकी के प्रमुख क्षेत्रों में आने वाले साल में लागू की जाने वाली परियोजनाओं, कार्यक्रमों और नीतियों के प्रस्तुतिकरण का काम सौंपा गया... एक बार अंतिम रूप दे दिए जाने के बाद ये प्रस्तुतिकरण आगामी वर्षों के लिए प्रमुख क्षेत्रों के लिए रोडमैप बन गए।' इसके बाद लेखक सचेत करते हैं-

'लेकिन जब यह बात क्रांतिकारी सुधारों पर आती है तो यह दृष्टिकोण, तरीका ज्यादा कारगर नहीं रह जाता है। परियोजनाओं और कार्यक्रमों को लेकर नौकरशाह काफी सचेत रहते हैं। यहां तक

यह सबका विकास कैसे हो सकता है

कि जब वे नीति में बदलावों का प्रस्ताव रखते हैं तो थोडा-थोडा करके ही आगे बढते हैं और कामचलाऊ से ज्यादा बमुश्किल ही कभी कुछ हो पाता है।'

मैं उनसे पूरी तरह सहमत हूं। हालांकि मैं उनके वैकल्पिक तरीके से सहमत नहीं हूं। गौर से देखें तो पता चलता है कि यह अलग नहीं है। वैकल्पिक मॉडल में मिशन प्रमुख मंत्री का स्थान ले लेगा, सलाहकार सिचव की जगह ले लेगा और नौजवान पेशेवर संयुक्त सिचवों और उनकी टीम का स्थान ले लेंगे!

विकेंद्रीकरण ही कुंजी

ऐसे में नतीजे स्वच्छ भारत और उज्ज्वला के नतीजों से अलग नहीं होंगे। स्वच्छ भारत के मामले में कड़वी सच्चाई यह है कि भारत के किसी भी बड़े राज्य (गुजरात को छोड़ कर) ने खुले में शौच से मुक्ति की घोषणा नहीं की। ऐसे शौचालयों का प्रतिशत कितना है, जो बनने के बाद भी उपयोग नहीं किए गए या उपयोग करने लायक नहीं हैं? उज्ज्वला के मामले में सफलता या नाकामी का सबूत लाभार्थी द्वारा खरीदे गए सिलेंडर को एक साल में भरवाने की औसत संख्या है, क्या यह निराश करने वाली तीन या आदर्श आठ है? आपको भी इसके जवाब पता हैं, जैसे कि मुझे हैं।

क्रांतिकारी सुधार केवल क्रांतिकारी नीतियों और लीक से हट कर काम के जरिए ही असर दिखा सकते हैं। 1991 से 1996 के बीच हमने लाल किताब को आग के हवाले कर दिया था और विदेश व्यापार को पूरी तरह से बदल डाला था। हमने विदेशी मुद्रा विनिमय कानून को छोड़ दिया था और विदेशी मुद्रा कोष को तेजी से बढ़ाया। उद्योगों के लाइसेंस की प्रथा को खत्म किया और उद्यमियों की एक नई पीढ़ी खड़ी कर दी। शिक्षा, स्वास्थ्य और ग्रामीण सड़कों व परिवहन के मामले में मोदी को कुछ ऐसा ही ठोस करने की जरूरत है। स्कूली शिक्षा के मामले में वे कांग्रेस के घोषणापत्र से भी कुछ ले सकते हैं और इसे राज्य सूची का विषय बना कर, राज्यों को पैसा देकर स्वतंत्रता दे सकते हैं, ताकि वे कुछ नया कर सकें और प्रतिस्पर्धी बन सकें। लोग अपनी-अपनी राज्य सरकारों से समय के भीतर अच्छे नतीजों की मांग करेंगे और उन्हें इसके नतीजे भी मिलेंगे।

एक प्रमुख विचार विकेंद्रीकरण का है। इसके छोटी अवधि वाले नतीजे, हो सकता है संतोषजनक न हों, लेकिन मध्यम और दीर्घअवधि में अच्छे शासन वाले राज्य आज की तुलना में बेहतर नतीजे देंगे और इससे राज्यों में भी लोगों की अच्छे शासन की मांग बढ़ेगी। विकेंद्रीकरण से सबसे तेजी से

और सबसे ज्यादा लाभ प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर स्वास्थ्य, पेयजल, स्वच्छता, अक्षय ऊर्जा, बिजली वितरण आदि में मिलेगा।

डॉ. सुब्रमनियन की सेवाएं लें

दूसरी सबसे मुश्किल चुनौती बेहद गरीबों को लेकर है। क्योंकि ये सबसे गरीब हैं, इसलिए साक्षरता, स्वास्थ्य सूचकांकों, आवास, स्वच्छता, खाद्य और जल की खपत और सार्वजनिक वस्तुओं तथा सेवाओं में पहुंच के मामले में भी सबसे निचले पायदान पर हैं। गांव में भी आप इन्हें एकदम किनारे पर ही पाएंगे। गरीब राज्यों में आप पाएंगे कि सारे गांव ऐसी ही आबादी से भरे पड़े हैं। हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि सरकारों ने विकास की प्रक्रिया में भारत के बेहद गरीब बीस फीसद लोगों को दरिकनार कर दिया। जो मंत्री और अफसर गांवों का दौरा करते हैं और कार्यक्रमों का निरीक्षण करते हैं वे मुख्य सड़क पर ही रुक जाते हैं या फिर रोक दिए जाते हैं। बेहद गरीब तक पहुंचने का एक ही तरीका है कि वे अपनी सहायता खुद कर सकें, इसमें उनकी मदद की जाए, उनमें उम्मीदें जगाएं, और इस उम्मीद का उनके दिलों और घरों में असर दिखाई दे, उन्हें गरीबी की जकड़ से बाहर निकालें और उनकी स्थिति सुधारें। प्रधानमंत्री-किसान योजना इसलिए मददगार नहीं होगी, क्योंकि बहुत थोड़े से किसान हैं जिनके पास अपनी थोड़ी-सी जमीन है, बाकी ज्यादातर तो खेतिहर मजदूर या दूसरे श्रमिक हैं, और बड़ी संख्या में मजदूर शहरों और महानगरों में रह रहे हैं। नीति में बदलाव से धन के सीधे हस्तांतरण से बुनियादी आय सुनिशिचत होगी। मोदी डा. अरविंद सुब्रमनियन के इस विचार को श्रेय दे सकते हैं और उन्हें वापस बुला कर विभाग का मुखिया बना सकते हैं ताकि वे योजना को तैयार कर उसे लागू कर सकें।

अगर हम छह-सात फीसद की सालाना वृद्धि दर पर ही घिसटते रहे तो कोई खास बदलाव नहीं होने वाला। अगर हम मौजूदा नीतियों को ही तोड़ते-मरोड़ते रहे और प्रशासनिक तंत्र की ठोका-पीटी करते रहे तो कुछ भी नहीं बदल पाएगा। अफसरों को असीमित अधिकारों से लैस करते जाने या लोगों को मुकदमे और जेल की धमिकयां देते रहने से तो और ज्यादा नुकसान ही होगा। रूपांतरकारी बदलाव लाने का सबसे कारगर हथियार यही है कि लोगों को सशक्त बनाएं और उनके मन में, उद्योग और क्षमता में भरोसा पैदा करें।

आ अब लौट चलें



छ दिनों से एक गाना गर्मी की लू से उठे छोटे से चक्रवात की तरह दिमाग में घूम रहा है। मैं कह नहीं सकता कि

यह ज्यादा मन का बवंडर है या फिर दिमाग मद्रा हो गया है, पर इतना जरूर जानता हं कि यह एक भूत की तरह मेरे पीछे पड़ गया है।

जब मैं कच्ची उम्र का था, तो गर्मियों में मेरी दादी मुझे दोपहर में घर के सामने मैदान में जाने से मना करती थी। वह कहती थी कि दोपहर में बाहर जाने से भूत चिपट जाता है और वह बच्चों की तबियत

ही नहीं खराब कर देता, बल्कि उन्हें पागल भी कर देता है। जरा-सी खिड़की खोल कर वे बाहर दिखाती थीं, जहां मैदान की तपती जमीन से एकाध बवंडर बल खाते हुए कागज, पत्ते और तिनकों को फर्श से उठा कर अर्श तक ले जाने की कोशिश कर रहे

होते थे। दादी कहती, वो देखो भूत है। नाच रहा है। उसे बच्चों

की तलाश है और जैसे ही तुम बाहर जाओगे, वह तुम पर चढ़ कर नाचने लगेगा। मैं और मेरे भाई भृत से चश्मदीद होने के बाद डर जाते थे और गर्मी भर घर में दुबके रहते थे।

हम जिस छोटे शहर में रहते थे, वहां जेठ और आषाढ़ में अक्सर आंधी आती थी। जब धूल से आसमान भर जाता था, तो पीली आंधी आती थी। काले बादलों के बीच उठी आंधी को काली आंधी कहा जाता था। उस जमाने में आंधियां सिर्फ काली और पीली होती थीं। पीली को केसरिया आंधी कहने का चलन नहीं था।

खैर, जो गाना रह रह कर मन में उबाल मार रहा है, वह राज कपूर की एक पुरानी फिल्म 'जिस देश में गंगा बहती है' से है। फिल्म का सीन तो मुझे पूरी तरह से याद नहीं है, पर 'आ फिर लौट चलें... नैन बिछाए... बाहें पसारे... तुझको पुकारे देस तेरा' की पुकार एक गहरी बांझ घाटी से उठी गूंज की तरह मन मानस से बार-बार टकरा कर लौट रही है। 'आ अब लौट चलें 'की सरगम और उसमें बसे शब्द दिमाग में ठीक उसी तरह का बवंडर उठाए हुए हैं जैसा कि मेरी दादी मुझे जेठ की गर्मी में दिखाया करती थी। उस बवंडर में जिस तरह से कागज के टुकड़े और तिनके लिपटे रहते थे, उसी तरह इस गाने ने भी कई फर्श पर अनदेखे पडे खयालात को झिंझोड़ कर उठ खड़े होने पर मजबूर कर दिया है। 'आ अब लौट चलें... तुझको पुकारे देस तेरा' की हूक घुमड़-घुमड़ कर दिल में उठ रही है।

अपना खेत-खलिहान, अपनी नहर, बड़े से आंगन वाला मकान और उसमें बना बैल घर, जिसके साथ में सटी हुई दो गायों की गौशाला को छोड़े हमारी कम से कम तीन पुश्तें गुजर चुकी हैं। पड़बाबा छोटे-मोटे जमींदार थे और उन्होंने बच्चों को शिक्षा के लिए शहर भेजा था। बच्चे ऐसा शहर गए कि लौट के ही न आए। गांव के घर की पगडंडी उनके इंतजार में ऐसी सूखी कि अब उसका मलबा ही घर के खंडहर तक जाने का पता देता है। पर जब एक बार असाइनमेंट के सिलसिले में उस इलाके में जाना हुआ, तो गांव जाने का मन हो गया था।

कुछ साल पहले मैं गांव गया था।

गांव मैं पहुंच तो गया, पर किसके पास जाता? अपने आने की खबर जिले के पुलिस कप्तान के जरिए ग्राम प्रधान तक पहले ही पहंचवा दी थी, सो कई लोग पंचायत घर में जमा हो गए थे। वे मेरे आने को कोई सरकारी दौरा समझ कर स्वागत के लिए तैयार थे। मैं अपने गांव को पहचान नहीं पाया था। ड्राइवर ने बताया कि हम पहुंच गए हैं। बचपन से लेकर इस उम्र तक की दूरी इतनी लंबी थी कि बीच के रास्ते के सभी रमृतिचिह्न मिट गए थे। मैं गांव के लिए अजनबी था और गांव मुझसे अनजान था। ग्राम प्रधान ने सारा इलाका घुमाया।

तीरंदाज

अश्विनी भटनागर

वास्तव में चुनौतियों के डर से हम

शहर में आकर छिप जाते हैं। रोटी का

कहीं दूर याद में एक पोखरिया उभरी। प्रधान से पूछा उसके बारे में। उसने सिर खुजलाया और फिर मेरी जिज्ञ-ासा शांत करने के लिए बुजुर्गो से पूछा। हां, कभी थी, उन्होंने बताया। जमाना हो गया उसे सूखे हुए। रेत का मैदान है अब

बहाना बनाते हैं और उस चूहे की तरह बन जाते हैं, जिसे रोटी तो दिखती है, पर पिंजरा नहीं दीखता, जिसमें रोटी वहां। और नहर? रखी हुई है। रोटी पर जल्दी से है, मगर गांव की दलबंदी ने उसे झपट्टा मारने के चक्कर में हम इतने घाव दे दिए पिंजरे में कैद हो जाते हैं। हैं कि उसका पानी उतर चुका है। कुओं का भी। गांव की नालियां ही

> सिर्फ भरी हुई हैं, बाकी सब सून है। अपने गांव में घूमते हुए कई खयाल घुमड़ने लगे। मैंने अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं के साथ पानी, स्वछता, स्वास्थ, शिक्षा आदि पर दर्जनों गोष्ठियां और प्रोजेक्ट किए हैं। बेहतरीन प्रेजेंटेशन देखे हैं और सारगर्भित विचारों पर चिंतन किया है। मैंने अपने से पूछा, मैं अपने से पराए हुए गांव से अंतरंग संबंध पुनः स्थापित क्यों नहीं कर लेता? मैंने और पड़ताल करनी शुरू कर दी।

सब हालात सुन कर लगा गांव एक बड़ी चुनौती है। बहुत कुछ अपने पर लेना पड़ेगा। दुसरे शब्दों में, अपनी जिम्मेदारी खुद ही निभानी पड़ेगी। शहर में तो मैं लगभग सब कुछ सरकार से लेकर हाउसिंग सोसाइटी के पदाधिकारियों पर डाल कर उन्हें कोस लेता हुं और फिर अपने हाथ झाड़ कर खड़ा हो जाता हूं। पर गांव में ऐसा नहीं कर पाऊंगा। पोखर में फिर से पानी लाना या स्कूल को नया रूप देना लंबा काम है, जिसमें हर रोज मेहनत करनी होगी। इसमें प्रेजेंटेशन और डिस्कशन से काम नहीं चलेगा, हाथ में फावड़ा और कुदाल लेकर जुटना पड़ेगा। मैं डर गया। अपने आप से बहाना किया और शहर भाग आया।

वास्तव में चुनौतियों के डर से हम शहर में आकर छिप जाते हैं। रोटी का बहाना बनाते हैं और उस चृहे की तरह बन जाते हैं, जिसे रोटी तो दिखती है, पर पिंजरा नहीं दीखता, जिसमें रोटी रखी हुई है। रोटी पर जल्दी से झपट्टा मारने के चक्कर में हम पिंजरे में कैद हो जाते हैं। और फिर छटपटाते रहते हैं।

मैं गांव के परिश्रम से भागा हुआ अभागा हूं। वहां की चुनौतियों के सामने पुरुषार्थ करने से मैं कन्नी काट आया हूं। सरलीकरण का शहरी बन गया हं। धृप से बच कर कृत्रिम ठंडक में दुबक गया हूं। 'बाहें पसारे... तुझको पुकारे देस तेरा' की पुकार हूक जरूर मरती है, पर मैं फौरन ही उसका वॉल्यूम शून्य पर कर के अपने को ट्रैफिक की चिंघाड़ में डुबा देता हूं। मेरा गांव मेरे पुरुषार्थ के लिए तरसता रहेगा। मैं भूत हो गया हूं, इसीलिए मेरे गांव का कोई भविष्य नहीं है। मेरे मन के बवंडर में वास्तव में कोई घास नहीं है।

कांग्रेस के दिन

हा जाता है मेरे बारे में कि मैं निष्पक्ष पत्रकार नहीं

है। मैंने कांग्रेस पार्टी का विरोध किया है दशकों से, लेकिन इस विरोध के कारण हैं, जिनको मैं सही मानती हं। जबसे मैं पत्रकार

बनी हूं तबसे मुझे कांग्रेस में बुराइयां ज्यादा दिखी हैं, अच्छाइयां बहुत कम। एक तो वंशवाद के खिलाफ हूं पूरी तरह, लेकिन कारण और भी हैं। इत्तेफाक से मेरी पहली नौकरी स्टेट्समैन अखबार में लगते ही इंदिरा गांधी ने इमरजंसी लगा दी थी, जिसके लगते ही जाने-माने पत्रकारों को जेल में डाल दिया गया था, सिर्फ इसलिए कि उन्होंने श्रीमती गांधी के उस कदम को गलत बताने की हिम्मत दिखाई थी।

इमरजंसी की आड़ में इंदिरा गांधी ने कांग्रेस पार्टी को अपने बेटे संजय के हवाले कर दिया था और सरकार को भी। मंत्रियों को हटाने का अधिकार दे दिया था इंदिरा गांधी ने अपने बेटे संजय को, जिसने उस समय तक कभी चुनाव तक नहीं लड़ा था। ज्यादितयां और भी थीं उस

दौर में, जिनको मैंने अपनी आंखों से देखा। दिल्ली में तुर्कमान गेट पर पुरानी मुगल बस्तियों को तोड़ने के लिए जब बुलडोजर भेजे गए संजय गांधी के आदेश पर, मैं वहां थी। यहां के निवासियों को जब यमुना पार बंजर जमीनों में फेंका गया बरसात के मौसम में, मैंने उनका हाल अपनी आंखों से देखा। पुरानी दिल्ली में जब नसबंदी के लिए जबर्दस्ती उठाया जाता था बुजुर्गों और नौजवानों को, मैं गवाह थी।

कश्मीर और पंजाब की राजनीतिक समस्याओं की शुरुआत हुई कांग्रेस की गलत नीतियों के कारण और इनको गंभीर राष्ट्रीय समस्या में तब्दील होते हुए मैंने करीब से देखा। यह भी देखा कि जब चीन जैसे मार्क्सवादी देश अपनी आर्थिक नीतियों में उदारता ला रहे थे, इंदिरा गांधी उन्हीं समाजवादी आर्थिक नीतियों पर अड़ी रहीं, जिनके कारण यह देश गरीब रहा है। इन नीतियों को राजीव गांधी ने आगे बढ़ाया है और सोनिया गांधी ने भी। सो, जब नरेंद्र मोदी ने देश में परिवर्तन

और विकास लाने के वादे किए और कुछ हद तक खरे उतरे हूं। कहा जाता है कि कांग्रेस पार्टी का मैं कुछ इन वादों पर, तो मेरा समर्थन उनको मिला है बिलकुल वैसे ज्यादा विरोध करती हूं और नरेंद्र मोदी की भिक्त जैसे इस चुनाव में देश के मतदाताओं का मिला है। मोदी की तभी सही ढंग से चलता है जब विपक्ष कमजोर नहीं होता।

आज कांग्रेस की हालत इतनी कमजोर है कि उनको



कांग्रेस अध्यक्ष बनने के बाद राहुल गांधी ने बहुत बार कहा है कि उनकी प्राथमिकता है संगठन को मजबूत करना। सवाल है कि ऐसा उन्होंने किया क्यों नहीं?

सलाह देना मैं अपना फर्ज मानती हुं। अगर राहुल गांधी वास्तव में कांग्रेस को पुनर्जीवित करना चाहते हैं, तो उनको पहले मालूम करना चाहिए कि जमीन पर कांग्रेस के कार्यकर्ता क्यों नहीं दिखते हैं आज। एक समय था जब हर गांव में हुआ करते थे सेवा दल के ईमानदार, मेहनती लोग जो हर आपदा में नजर आते थे लोगों की सहायता करते। आज ग्रामीण भारत में जब घूमती हुं तो मुझे कहीं नहीं दिखते हैं ये सफेद गांधी टोपी पहने कार्यकर्ता। जबसे ऐसे लोग गायब होने लगे हैं, तबसे कांग्रेस कमजोर होने लगी है, खासकर इसलिए कि इनकी जगह ले ली है दरबारियों ने, जो राजनीति में आए हैं अपने परिवार की सेवा करने, जनता की सेवा करने नहीं। सुना है कि राहुल गांधी ने चुनाव हारने के बाद खुद माना कि उनके मुख्यमंत्री दिल्ली में बैठ कर अपने बेटों के लिए टिकट हासिल करने का काम कर रहे थे अपने राज्यों में, चुनाव प्रचार करने के बजाय।

कांग्रेस की सभ्यता अब दरबारियों की बन गई है और इस दरबार की ऊर्जा है वंशवाद। सोनिया गांधी के दौर में वंशवाद कांग्रेस की जड़ों तक पहुंच चुका है, सो अब सरपंच भी तभी जरूरत से ज्यादा। यह आरोप कुछ हद ठीक भी - समर्थक आज भी हूं, लेकिन यह भी मानती हूं कि लोकतंत्र - हटते हैं अपने पद से, जब अपने किसी वारिस को उस पर बिठा लेते हैं। सो, उन लोगों को राजनीति में आने का मौका तक नहीं मिलता है, जो सेवा भाव से आना चाहते हैं। ऐसा

होने से कई तकरीबन सारे विपक्षी दल कमजोर हुए हैं, लेकिन कांग्रेस का कमजोर होना लोकतंत्र को सबसे ज्यादा कमजोर करता है, क्योंकि वही एक राजनीतिक दल है, जो राष्ट्रीय स्तर पर नरेंद्र मोदी को चुनौती दे सकता है।

रही बात कांग्रेस की सेक्युलर विचारधारा की, तो यह कमजोर हुई है इतनी कि राहुल गांधी अपने आप को जनेऊधारी ब्राह्मण साबित करने में लगे रहे चुनाव अभियान से पहले ही। उनकी बहन जब सक्रिय राजनीति में उतरीं तो जहां गईं. पहले किसी मंदिर में दर्शन करने गईं। सो, शायद मुसलमानों ने इस बार मोदी को वोट ज्यादा दिया है, क्योंकि उनको लगने लगा होगा कि इन दोनों दलों में जो अंतर था कभी, अब नहीं रहा है। सो, मोदी को क्यों न दिया जाए वोट, जिसने कुछ हद तक उनके गांवों में परिवर्तन ला कर तो दिखाया है।

कांग्रेस अध्यक्ष बनने के बाद राहुल गांधी ने बहुत बार कहा है कि उनकी प्राथमिकता है संगठन को मजबूत करना। सवाल है कि ऐसा उन्होंने किया क्यों नहीं? संगठन को मजबत करने के बदले उन्होंने सिर्फ अपने परिवार को मजबूत करने पर ध्यान दिया है और अपने दरबार में ऐसे सलाहकारों को नियुक्त करने पर ध्यान दिया है, जिन्होंने कभी चुनाव लड़ा ही नहीं है। ऊपर से इन सलाहकारों में अहंकार इतना दिखा है कि उनके हर वक्तव्य ने कांग्रेस को थोड़ा और कमजोर किया है। सैम पित्रोदा अब गायब हो गए हैं और शायद गायब रहेंगे, लेकिन उनका 'हुआ तो हुआ' वाला बयान भुलाना मुश्किल है। पित्रोदा का यह बयान तो इतना चल रहा है कि मैंने जब एक वरिष्ठ कांग्रेस नेता से पार्टी की हार के बारे में पूछा, उसने हंस कर कहा 'हुआ तो हुआ'।

हिंदी को पीटना बंद करें



ल भर सबसे आगे रहने वाला आपका चैनल दिखाएगा आपको सबसे पहले हर पल शपथ ग्रहण समारोह की खबर।

- सबसे प्रामाणिक और सबसे जल्दी खबर देगा आपका यह प्रिय चैनल कि किसका भाग्य खुलेगा?

- अरे, वो क्या देगा असली खबर! वह भी सबसे तेजी से देंगे हम, बस कपा बनाए रहिए, देखते रहिए हमें। एक से एक विशेषज्ञ बताएंगे आपको हर खबर के अंदर की बात।

– ये है आपका लाडला नंबर वन चैनल। दुरदर्शन हमें लाइव फीड देगा, उसे लेकर हम आपको बताएंगे कि किसके भाग्य में क्या लिखा है? इस तरह पहली खबर देने वाला रहा दूरदर्शन और उससे उधार लेकर बताने वाले रहे निजी चैनल। तब भी हर चैनल दावा करता रहा कि हम देंगे

सबसे पहले भव्य शपथ ग्रहण समारोह की सबसे पहली खबर! सबके पास होती है दूरदर्शन से उधार ली खबर, लेकिन बेचते ऐसे हैं, जैसे वह उन्हीं की लाई खबर हो!

जिस तरह सब्जी वाला बेचता है सब्जी पर पानी मार मार कर, उसी तरह हमारे चैनल बेचा करते हैं दूरदर्शन से उधार ली खबर पानी मार मार कर। पापी पेट के वास्ते क्या क्या नहीं करना पड़ता?

सुबह सजधज कर कैमरों के आगे आकर सिर्फ बोलते रहना है कि आज बनेगा इतिहास। आप बने रहिए हमारे साथ इतिहास के गवाह कि कौन बनेगा मंत्री, कौन बनेगा नंबर दो, नंबर तीन, चार...

तीस मई के दिन सारे चैनल यही कयास भिडाने में लगे रहे और जब शपथ ग्रहण समारोह हो चुका तो करने लगे व्याख्याएं कि किसे क्या मिलेगा?

शपथ समारोह के दौरान समुचा राष्ट्रपति भवन और प्रांगण तिरंगी रौशनियों में नहाया रहा। एक से एक नामी मेहमानों को कैमरे दिखाते और कहते कि ये आ रहे हैं केजरीवाल और मनीष सिसोदिया, ये रहे पूर्वमंत्री जी! देखो इनको क्या मिलता है ? ये हैं वहां के राज्यपाल जी, ये रहे कल्याण सिंह जी, ये रहे रजनीकांत, ये रहीं कंगना रनौत और ये ये वो वो वो... ये आ रही हैं सुषमा जी! क्या मंत्री बनने वाली हैं वे?

कमेंटेटर अपनी कल्पना दौडाते रहे। ये रहे मॉरीशस के महामहिम, ये बांग्लादेश के, ये श्रीलंका के... पाकिस्तान का

पत्ता बिम्स्टेक देशों ने काटा!

eikaek

सुधीश पचौरी

समारोह से पहले तक यह खबर चौंकाती रही कि शपथ ग्रहण समारोह में ममता दीदी पधारेंगी. फिर जैसे ही एक चैनल ने खबर दिखाई कि इस समारोह में बंगाल की चुनावी हिंसा में मारे गए चौवन भाजपा कार्यकर्ताओं के परिजन भी आएंगे, तो ममता जी का आना 'बायकाट' में बदल गया। एक अंग्रजी एंकर व्यर्थ में रोता रहा कि शपथ ग्रहण में भी राजनीति की जा रही है! लेकिन भैये! कहां नहीं हैं राजनीति?

सबके पास होती है दूरदर्शन से उधार ली खबर, लेकिन बेचते ऐसे हैं,

जैसे वह उन्हीं की लाई खबर हो! जिस तरह सब्जी वाला बेचता

है सब्जी पर पानी मार मार कर, उसी तरह हमारे चैनल बेचा

करते हैं दूरदर्शन से उधार ली खबर पानी मार मार कर।

इसके बरक्स राहल, सोनिया और मनमोहन सिंह को

इससे पहले कई एंकर और रिपोर्टर राहुल के इस्तीफे का

शपथ ग्रहण समारोह में आया देख अच्छा लगा, लेकिन राहल

के रकीब उन एंकरों का कोई क्या करे, जो राहुल की देहभाषा

घटाटोप बनाते रहे, फिर पूछते रहे कि इस्तीफा दिया कि नहीं

दिया। कुछ कहते कि दिया था, लेकिन वापस ले लिया। फिर

बताने लगते कि वापस नहीं लिया, लेकिन उसे सीडब्लूसी पर

छोड़ा। कुछ एंकर फिर भी मजाक उड़ाते रहे कि राहुल का

इस्तीफा राहुल ही मान सकते हैं। फिर चुटकी लेते रहे कि कुछ

लोग राहुल को मनाने का नाटक कर रहे हैं और ये देखो कुछ

हृष्टपुष्ट कांग्रेसी भूख हड़ताल पर भी बैठे हैं। एक एंकर ने

राहुल के लिए एक सही शब्द दिया कि वे 'कोप भवन' में हैं!

पर ही आपत्ति करने लगे कि देखों वे किस तरह बैठे हैं?

बने रहेंगे। परिणामों के तुरंत बाद संसद के केंद्रीय कक्ष में मोदी जी का भाषण एक यादगार भाषण रहा। 'सबका साथ सबका विकास

के साथ ज्यों ही उन्होंने 'सबका विश्वास' और जोड़ा कि 'चिर अविश्वासियों' के कान खड़े हो गए। तिस पर एमपी के कुछ लिंचरों ने अपनी नई लिंचलीला से उनको हथियार दे दिया। एक अंग्रेजी एंकर ने इन लिंचरों से बातचीत भी दी। लिंचरों

फिर खबर बनी कि राहुल नए अध्यक्ष के बनने तक अध्यक्ष

ने अपने चेहरे रूमाल से ढंके हुए थे, लेकिन वे एकदम बेखौफ होकर बोलते दिखते थे कि लोग जब बीफ ले कर जाते हैं, तो हमें गुस्सा आता है, हम उनको ठोक देते हैं... आप ठोकने वाले कौन होते हैं, के जवाब में एक बोला कि हम प्रशासन को खबर देते हैं। तब ठोकते क्यों हैं? तो बोला कि हम इनको ठोकेंगे। एंकर परेशान होकर कहता रहा कि जब ऐसों को मंत्री माला पहनाते हैं, तो इनके हौसले बढ़ जाते हैं। अंत में उसने इनको देसी 'कू क्लक्स क्लान' का नाम दिया!

इसी बीच हरियाणा में एक और 'हेट क्राइम' हो गया। एक युवक को उसकी टोपी के लिए पीटा गया। फिर खबर पर लीपापोती होती दिखी कि यह 'हेट क्राइम' न होकर 'तू तू मैं मैं' का

सौ शुभ समाचारों को बेकार करने के लिए

ऐसा एक अशुभ समाचार ही काफी होता है। एक कुघटना सारे सीन को बिगाड़ कर रख देती है। जब कोई कुघटना खबर बन कर टीवी के जरिए नाना हाथों में पड़ती है तो उसके मानी 'अनंत' और 'अनियंत्रित' हो उठते हैं! आपके नेक इरादे भी अगले पल संदेहास्पद बताए जाने लगते हैं।

चुनाव परिणाम आने के तुरंत बाद एक दाक्षिणात्य दल के मार्फत एक अंग्रेजी चैनल ने लाइन दी कि 'इंडिया इज नॉट ए हिंदी स्पीकिंग स्टेट'!

सत्यवचन महाराज! भारत अगर 'हिंदी राज्य' नहीं है, तो वह 'तमिल राज्य' भी नहीं है और न वह 'अंग्रेजी राज्य' ही है।

जब चुनाव के परिणामों पर बस न चला, तो हिंदी को ही ठोक दिया! बिना हिंदी के इस देश को चला लोगे क्या? इसीलिए हम विनती करते हैं कि हिंदी को पीटना बंद करें प्लीज!

नई दिल्ली